© 2017 IJSRST | Volume 3 | Issue 1 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X
Themed Section: Science and Technology

संस्कृतसाहित्य में पाश्चात्य कवियों की भूमिका

डॉ0 राजकुमार
ग्राम–सरवट,पोस्ट–सरवट,
जिला–सोनभद्र उत्तर प्रदेश भारत 231215

वागर्थाविव सम्पृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये।
जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ।।[1]

संस्कृतसाहित्य की धारा परस्सहस्र वर्षों से आधुनिक युग तक अजस्र गति से प्रवाहित होती चली आरही है। यह पुरातन भी है और नित्य–नूतन भी। सह अस्तित्व के सिद्धान्त के आधार पर स्त्री और पुरुष दोनों ने ही आदिकाल से संस्कृतसाहित्य के सर्जन एवं उन्नयन में अपना–अपना अवदान किया है। वैदिक ऋषिकाओं से लेकर आधुनिक भारत में जन्म लेने वाली परम विदुषी नारियों एवं कवयित्रियों ने जिस तरह संस्कृतसाहित्य का संवर्धन किया है, उसी तरह विदेशों में जन्म लेने वाली अनेक नारियों ने भी अपने–अपने क्षेत्र में समय–समय पर संस्कृतसाहित्य को अपना योगदान किया है।

वर्ष 1972 में नई दिल्ली में जब एक बृहत् 'अन्ताराष्ट्रिय संस्कृत सम्मेलन' सफलता पूर्वक सम्पन्न हो गया तो आगामी वर्ष में विश्वभर के संस्कृत–विद्वानों ने विचार–विमर्श कर एक वैश्विक संस्था'International Association of Sanskrit Studies' (अन्ताराष्ट्रिय–संस्कृताध्ययन–समवाय) की स्थापना की और फ्रांस की राजधानी पेरिस में इसका मुख्यालय स्थापित किया गया। उस समय पेरिस की सोरबोन यूनिवर्सिटी में लुई रेनू की शिष्य–परम्परा की अन्यतम प्रो. कोलेत कैय्या थीं,जो जैन दर्शन एवं प्राकृत भाषा की विशेषज्ञ थीं। प्रो. कैय्या ने इस वैश्विक संस्था को पालित–पोषित करने में महत्त्वपूर्ण योगदान किया। अपने निधन से पूर्व तक वे इसके बोर्ड की सक्रिय सदस्य रहीं। प्रो. कैय्या ने भाषा–वैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य में अर्धमागधी प्राकृत में लिखे श्वेताम्बर जैन धर्म के ग्रन्थों का समीक्षण किया तथा प्राकृत–अपभ्रंश ग्रन्थों के सम्पादन एवं अनुवाद भी किये। प्रो. कैय्या के निधन के पश्चात् उनकी शिष्या भारत–फ्रांसीसी समुदाय की प्रो. नलिनी बलबीर ने उनकी शैक्षिक परम्परा में आगे बढ़कर काम किया। नलिनी बलबीर ने, जो पेरिस की सोरबोन यूनिवर्सिटी में ही 1988 से प्रोफेसर हैं, जैन दर्शन एवं प्राकृत के क्षेत्र में बृहत् अनुसंधान कार्य किया है। प्रो. नलिनी ने प्राकृत साहित्य के अनेक मूल ग्रन्थों का सम्पादन, अध्ययन एवं भाषान्तरण किया है और आगे भी वे इस क्षेत्र में निरन्तर कार्य कर रही हैं। प्रो. कैय्या के काल से ही नलिनीभी 'वर्ल्ड संस्कृत कॉन्फ्रेंस' के अधिवेशनों में सक्रिय भागीदारी करती रही हैं। इनके अतिरिक्त सोरबोन यूनिवर्सिटी में प्रो. मेरी–क्लाउडे पोर्शे संस्कृत–काव्यशास्त्र की विशेषज्ञ प्राध्यापिका के रूप में नियुक्ति यहाँ 1977–78 में हुई थी। इससे भी पूर्व पौराणिक महाकाव्य एवं पुराणों के अध्ययन के क्षेत्र में प्रो. मैडलीने बियार्डेऊ का नाम उल्लेखनीय है, जिन्होंने मीमांसा एवं वेदान्त दर्शन के अतिरिक्त महाभारत पर गम्भीर शोधकार्य किया। संस्कृत नाटक एवं नाट्यशास्त्र के क्षेत्र में फ्रांस में सिलवाँ लेवी एवं लुई रेनू की परम्परा को आगे बढ़ाने वाली प्रोफेसर है बासाँ बूदों बिन, जो नाट्यशास्त्र एवं सौन्दर्यशास्त्र के क्षेत्र में निरन्तर शोध कर इस विषय पर कार्य कर रही हैं। प्रख्यात फ्रांसीसी वैयाकरण प्रो. प्येर सिल्वाँ फिलियोज़ा की पत्नी डॉ. वसुन्धरा फिलियोज़ा भी पेरिस में

संस्कृत एवं भारतीय मूर्तिकला के क्षेत्र में विशेष कार्य कर रही हैं। उनके घर का वातावरण पूरी तरह संस्कृतमय है। अपनी दोनों पुत्रियों के नाम उन्होंने संस्कृत–व्याकरण की टीकाओं के आधार पर रखे हैं।[1]

फ्रांस की भाँति जर्मनी में अठारहवीं शताब्दी के अन्त में संस्कृत का विधिवत् पदार्पण हो चुका था। हम्बोल्ट यूनिवर्सिटी, बर्लिन में भारतीय विद्या अध्ययन विभाग की स्थापना 1821 ई. में हुई, जहाँ फ्रांज, बॉप, वेबर, पिशेल, ल्यूडर्स जैसे संस्कृतज्ञों ने उच्चस्तरीय संस्कृत–अध्ययन–अनुसन्धान को गति प्रदान की। प्रो. हैनरिख ल्यूडर्स ने जब बर्लिन के इस विश्वविद्यालय में लम्बे समय तक अध्यक्ष पद पर प्रतिष्ठित रहते हुए संस्कृत–वाङ्मय के अनेक क्षेत्रों में काम किया, उसी समय उनकी पत्नी श्रीमती ऐल्से ल्यूडर्स ने भी पति की सहभागिता की। उन्होंने महाभारत के शोधन का कार्य किया, मध्य एशिया से प्राप्त पाण्डुलिपियों को पढ़कर अनुवाद सहित प्रकाशित किया, जिनमें शुकसप्तति एवं जातकमाला की लिपियाँ सम्मिलित थीं। विदुषी ल्यूडर्स ने अपने भारत–भ्रमण का वृत्तान्त 'Under the Indian Sun' नाम से लिखकर ग्रन्थ रूप में प्रकाशित कराया था। बर्लिन के इसी विभाग की डॉ. सोर्गेल ने 'इण्डियन आर्ट हिस्ट्री' पर काम किया है। 'आई. ए. एस. एस.' संस्था के महासचिव प्रो. जे. सोनी की जर्मन पत्नी श्रीमती एल. सोनी ने भी फिलिप्स यूनिवर्सिटी, मारबुर्ग में रहकर अपने पति के संस्कृत–सम्बन्धी कार्यों में सहभागिता की है। जर्मनी की म्यूनिख यूनिवर्सिटी के प्रोफेसर रोबर्ट ज़ाइडेनबॉस की योग्य शिष्या डॉ. ईवा मारिया ग्लासब्रेनर संस्कृत की युवा पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करती हैं। वे संस्कृतभाषिणी हैं और संस्कृत–शोधकार्य में दक्षता प्राप्त कर चुकी हैं।[2]

यूरोप द्वीप के देशों में इटली एक ऐसा देश है, जहाँ संस्कृत के क्षेत्र में गम्भीर काम हुए हैं। इटली के ट्यूरिन नगर में संस्कृत एवं भारतीय विद्या के अध्ययन की सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण संस्था है 'चेस्मियो' (CESMEO) जिसे 'International Institute of Advanced Asian Studies' कहा जाता है। इसकी स्थापना 1982 में हुई। लम्बे समय तक इसके निर्देशक प्रो. ऑस्कर बोटो रहे। बोटो के निधन के बाद उनकी शिष्या प्रो. इरमा पियोवानो इसकी निर्देशिका हैं। इस संस्था की अनेक बृहत् परियोजनाओं में से एक है–'Minor Sanskrit Texts and Studies on Social and Religious Law'.इसके अन्तर्गत इरमा पियोवानो ने 'दक्ष स्मृति' का सटिप्पण सम्पादन किया है। चेस्मियो संस्था का काम है– संस्कृत एवं प्राच्य विद्या के सर्वाधिक प्रतिष्ठित जर्नल 'Indologica Taurinensia' का प्रकाशन। यह वस्तुतः 'इण्टरनेशनल एसोसिएशन ऑफ संस्कृत स्टडीज' का मुखपत्र है, और इसके प्रकाशन का दायित्व इरमा बड़ी दक्षता के साथ निभा रही हैं।[3]

सोवियत रूस में संस्कृत–अध्ययन की सुदृढ़ परम्परा रही है। रूस की राजधानी मास्को में स्थित 'Institute of World Literature' की 'Russian Academy of Sciences' में कार्यरत संस्कृत–विदुषी हैं डॉ. नटालिया लिडोवा। वे साहित्य–मर्मज्ञ हैं। उन्होंने अपना समग्र शैक्षिक जीवन भरत के नाट्यशास्त्र के अध्ययन एवं अनुसंधान में व्यतीत किया है। वे प्रायः नाट्यशास्त्र के विविध आयामों पर अपने शोध–निबन्ध लिखती रही हैं। विश्व में कहीं पर भी नाट्यशास्त्रीय विषय पर होने वाले परिसंवादों एवं संगोष्ठियों में उनकी भागीदारी सुनिश्चित रहती है। डॉ. लिडोवा 'वर्ल्ड संस्कृत कान्फ्रेंस' के सभी अधिवेशनों में सक्रिय रूप ये सम्मिलित होती रही हैं तथा सौन्दर्यशास्त्र एवं नाट्यशास्त्र से सम्बद्ध शोध में अपना अवदान देती रही हैं।[4]

यूरोपीय देशों में ब्रिटेन भी ऐसा देश है जहाँ संस्कृत को पर्याप्त प्रश्रय मिला। इग्लैण्ड की राजधानी लन्दन में ऑक्सफोर्ड, कैम्ब्रिज एवं लन्दन यूनिवर्सिटी में संस्कृत के अध्यापन एवं अनुसंधान की व्यवस्था है। वर्तमान युवा पीढ़ी के संस्कृतज्ञों का प्रतिनिधित्व करने वाली डॉ. वेण्डी फिलिप्स रोड्रिजुएज़

कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी की 'Faculty of Oriental Studies'में कार्यरत हैं। उनका कर्तृत्व तब अधिक प्रकाश में आया, जब 14वीं 'वर्ल्ड संस्कृत कॉन्फ्रेंस' में जापान में उनके शोध–प्रबन्ध पर उन्हें 'Best Thesis Prize' प्राप्त हुआ। स्कॉटलैण्ड की राजधानी एडिनबरा में स्थित एडिनबरा यूनिवर्सिटी के प्रो. ब्रॉकिंगटन की पत्नी मेरी ब्रॉकिंगटन भी रामायण में विशेष रूचि रखती हैं। उन्होंने 'Epic and Puranic Bibliography' तैयार करने में अपने पति की सहायता की।[5]

संस्कृत के प्रति विशेष प्रेम रखने वाली डॉ. बिलियाना म्यूलर का जन्म तो बल्गारिया में हुआ, पर उनका कार्यक्षेत्र जर्मनी अधिक रहा। वे अन्य विषयों के अतिरिक्त संस्कृत–नाट्य एवं भारतीय नृत्यकला में विशेष रूचि रखती हैं और नृत्य की शिक्षा भारत आकर लेती हैं। वे प्रायः भारत आती रहती हैं और दिल्ली विश्वविद्यालय में तीन वर्ष तक 'विजिटिंग ऐसोशियेट प्रोफेसर' भी रह चुकी हैं।6

संयुक्त राज्य अमेरिका में अनेक विश्वविद्यालय संस्कृत का केन्द्र रहे हैं। पश्चिम अमेरिका में बर्कले स्थित केलिफोर्निया यूनिवर्सिटी में संस्कृत–अध्ययन की परम्परा 1897 से है। वर्तमान में वहाँ प्रतिष्ठित संस्कृत–विद्वान् रोबर्ट गोल्डमेन हैं, जो रामायण–परियोजना के निदेशक एवं मुख्य सम्पादक हैं। उनकी पत्नी सेली गोल्डमेन सीता की तरह पति की अनुयायिनी हैं। वे संस्कृतज्ञा है, वहीं पर प्राध्यापिका है, तथा उनकी सह–अनुवादिका हैं। यह दम्पति–युगल भारत एवं संस्कृत से सर्वात्मना जुड़ा है।

अमेरिका के अतिरिक्त संस्कृत से जुड़ा एक और महत्त्वपूर्ण देश है कनाडा, जहाँ की ब्रिटिश कोलम्बिया यूनिवर्सिटी, वेंकूवर में संस्कृत–अध्ययन की पुरानी परम्परा है और इसी संस्था में आगामी वर्ष में 17वीं 'वर्ल्ड संस्कृत कॉन्फ्रेंस' आयोजित होने जा रही है। इस यूनिवर्सिटी के 'Center for India and South Asia Research' में प्रो. मन्दाक्रान्ता बोस संस्कृत–सौन्दर्यशास्त्र एवं संगीतशास्त्र की विशेषज्ञ विदुषी हैं। उन्होंने 17वीं शताब्दी के ग्रन्थ 'संगीतनारायण' पर शोधकार्य किया है। वे संस्कृत में काव्यशास्त्र, नृत्य–साहित्य एवं नारी–विषयक अध्ययन में विशेष लेखन कार्य पर चुकी हैं। अपने संगीतशास्त्रीय शोध के कारण ही उन्हें वैश्विक पटल पर जाना जाता है। इसी विश्वविद्यालय के इसी विभाग में दीर्घकाल से प्रतिष्ठित प्रोफेसर हैं अशोक अक्लूज़कर और वहीं अधिष्ठित हैं उनकी पत्नी विद्युत् अक्लूजकर। यह दम्पति 'अन्ताराष्ट्रिय संस्कृत समवाय' एवं इसके आयोज्यमान विश्व संस्कृत सम्मेलनों से सर्वात्मना जुड़े हैं। प्रो. विद्युत् ने पुराण, पौराणिक महाकाव्यों पर विशेष कार्य किया है तथा क्लासिकल, मध्यकालीन एवं आधुनिक साहित्य के विविध आयामों का अध्ययन एवं लेखन किया है। वे संस्कृत–सम्बन्धी शोधकार्य में निरन्तर सक्रिय हैं। कनाडा की ही एक और संस्कृत विदुषी है प्रो. टी. एस. रूक्मिणी, जो कोनकोर्डिया यूनिवर्सिटी, मोण्ट्रियल के धार्मिक अध्ययन विभाग में 'हिन्दू स्टडीज' के पीठ पर अधिष्ठित हैं। उनके शोध के प्रमुख क्षेत्र हैं– योग, अद्वैत वेदान्त, वेदान्त में भक्ति–सम्प्रदाय, हिन्दू धर्म में संन्यास–परम्परा आदि। प्रो. रूक्मिणी ने धर्म एवं दर्शन के इन्हीं विषयों पर गम्भीर लेखन कार्य किया है। कनाडा को संस्कृत का गढ़ बनाने में इस पण्डिता–त्रयी का प्रभूत अवदान है।

दक्षिण–पूर्व एशिया का समग्र क्षेत्र संस्कृत भाषा एवं साहित्य से प्रभावित क्षेत्र है। उसमें भी थाइलैण्ड पर संस्कृत का अमिट प्रभाव पड़ा है। थाइलैण्ड के राजघराने संस्कृत के गढ़ बनते रहे हैं। थाइलैण्ड की वर्तमान राजकुमारी महाचक्री सिरिन्धौर्न ने भारतीय विद्वान् प्रो. सत्यव्रत शास्त्री से विधिवत् कई वर्षों तक संस्कृत की शिक्षा ग्रहण की। परास्नातक कक्षा में अपना लघु शोध–प्रबन्ध लिखने के लिए उन्होंने उत्तर–पूर्व थाइलैण्ड के क्षेत्र प्नोमरूङ् के प्रासाद में प्राप्त संस्कृत–अभिलेख को ग्रहण किया। संस्कृत के साथ उनका जुड़ाव इतना आगे बढ़ा कि थाइलैण्ड की राजधानी बैंकॉक की शिल्पाकॉर्न यूनिवर्सिटी के 'Sanskrit Studies Centre' द्वारा वर्ष 2001 एवं 2005 में जो 'इण्टरनेशनल संस्कृत कॉन्फ्रेंस' आयोजित की गईं तथा 2016 में 16वीं 'वर्ल्ड संस्कृत कॉन्फ्रेंस' आयोजित

हुई, वे राजकुमारी के ही सम्मान में हुईं और राजकुमारी ने ही उनका विधिवत् उद्घाटन किया। संस्कृत को इस योगदान हेतु सिरिन्धौर्न को भारतीय राष्ट्रपति द्वारा सम्मानित भी किया जा चुका है। थाइलैण्ड की थम्मासात यूनिवर्सिटी में स्थापित 'इण्डिया स्टडीज़ सेण्टर' की निदेशक रहीं डॉ. स्रीसुरांग फुलथेपियो रामायण की विशिष्ट विदुषी हैं। संस्कृत एवं रामायण पर उन्होंने अनेक शोध–पत्र लिखे हैं। 2016 में जबलपुर में हुए एक 'अन्तर्राष्ट्रीय रामायण सम्मेलन' में उनकी अध्यक्षता में 'भारत–थाई रामायण फोरम' की स्थापना हुई है। शिल्पाकॉर्न यूनिवर्सिटी, बैङ्कॉक के 'प्राच्यभाषा विभाग' की प्राध्यापिका प्रो. कुसुम रक्सामनि ने कनाडा के टोरण्टो विश्वविद्यालय में जाकर संस्कृत–कथाओं के तुलनात्मक अध्ययन का काम किया है। वहीं की एक अन्य प्राध्यापिका डॉ. मनीपिन फ्रोम्सुथिराक ने इंग्लैण्ड के लन्दन विश्वविद्यालय से धर्मों के तुलनात्मक अध्ययन पर काम कर पी–एच. डी. डिग्री प्राप्त की है। चूलालौङ्कौर्न विश्वविद्यालय की डॉ. प्रानी लापानित ने क्षेमेन्द्र के 'चारुचर्या' और 'सुवृत्ततिलक' पर काम किया है। 2000 ई. में जब शिल्पाकॉर्न यूनिवर्सिटी के 'संस्कृत स्टडीज़ सेण्टर' में डॉक्टरेट डिग्री हेतु शोध–कार्य का शुभारम्भ हुआ तो एक संग्रहालय की निदेशिका सुश्री अमरा श्रीसुचात ने सर्वप्रथम शोध में प्रवेश लेकर 'पातञ्जल योगसूत्र' पर काम कर पी–एच. डी. उपाधि प्राप्त की।

संस्कृत–वाङ्मय को महिलाओं के वैश्विक अवदान का एक ज्वलन्त उदाहरण है डॉ. जया स्टाज़, जिनका जन्म तो बेल्जियम में हुआ, पर संस्कृत–शिक्षा उन्होंने भारत एवं थाइलैण्ड में ग्रहण की। विजिटिंग प्रोफेसर के रूप में थाइलैण्ड जाने पर 'संस्कृत स्टडीज़ सेण्टर' में मेरा उनसे साक्षात्कार हुआ। उन्होंने तीन वर्षों तकमुझसे संस्कृत–भाषा, काव्यशास्त्र एवं गीता का नियमित अध्ययन किया। जया को जीवन में तीन वस्तुओं से प्रेम है– संस्कृत, भारत एवं श्रीकृष्ण। संस्कृत–प्रेम के कारण वे भारत के आन्ध्र प्रदेश एवं कर्नाटक प्रदेश के उन गाँवों में गईं, जहाँ सर्वसाधारण द्वारा संस्कृत भाषा बोली जाती है, गीता में निहित धर्म एवं दर्शन को तुलनात्मक रूप से लेकर उन्होंने डॉक्टरेट की और सम्पूर्ण भगवद्गीता का अपने देश की डच भाषा में अनुवाद कर उसे बेल्जियम से ही प्रकाशित कराया। श्रीकृष्ण के प्रति अनुरक्ति के कारण मेरी प्रेरणा से डॉ. स्टाज़ वृन्दावन जाकर रहने लगीं और वहाँ 'जीवा इंस्टीट्यूट ऑफ वैदिक स्टडीज़' की सेक्रेटरी बनकर सेवारत हैं। व्रज में बसने पर उन्होंने आत्मकथा–रूप में एक पुस्तक लिखी–'From Taj to Vraj'. सत्य की खोज कराने को उन्मुख यह पुस्तक नारी–जीवन–दर्शन की एक अद्भुत पुस्तक है।

सन्दर्भग्रन्थ सूची

1. संकृतविद्या पत्रिका पृ 132
2. संकृतविद्या पत्रिका पृ 15
3. आधुनिक संस्कृत साहित्य का इतिहास–पृ563
4. पाश्चात्य संस्कृत साहित्य का इतिहास पृ 231
5. पाश्चात्य संस्कृत साहित्य का इतिहास पृ 12
6. पाश्चात्य संस्कृत साहित्य का इतिहास पृ 431